विष्णु खरे

(सन् 1940–2018)

विष्णु खरे का जन्म छिंदवाड़ा, मध्य प्रदेश में हुआ। क्रिश्चियन कॉलेज, इंदौर से 1963 में उन्होंने अंग्रेज़ी साहित्य में एम.ए. किया। 1962-63 में दैनिक ***इंदौर समाचार*** *में उप संपादक रहे। 1963-75 तक मध्य प्रदेश तथा दिल्ली के महाविद्यालयों में अध्यापन से भी जुड़े। इसी बीच 1966-67 में लघु-पत्रिका* ***व्यास*** *का संपादन किया। तत्पश्चात् 1976-84 तक साहित्य अकादमी में उप सचिव (कार्यक्रम) पद पर पदासीन रहे। 1985 से* ***नवभारत टाइम्स*** *में प्रभारी कार्यकारी संपादक के पद पर कार्य किया। बीच में लखनऊ संस्करण तथा रविवारीय* ***नवभारत टाइम्स*** *(हिंदी) और अंग्रेज़ी टाइम्स ऑफ़ इंडिया में भी संपादन कार्य से जुड़े रहे। 1993 में जयपुर नवभारत टाइम्स के संपादक के रूप में भी कार्य किया। इसके बाद जवाहर लाल नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय में दो वर्ष वरिष्ठ अध्येता रहे। अब स्वतंत्र लेखन तथा अनुवाद कार्य में रत हैं।*

औपचारिक रूप से उनके लेखन प्रकाशन का आरंभ 1956 से हुआ। पहला प्रकाशन टी.एस. इलियट का अनुवाद ***मरू प्रदेश और अन्य कविताएँ*** *1960 में, दूसरा कविता संग्रह* ***एक गैर-रूमानी समय में*** *1970 में प्रकाशित हुआ। तीसरा संग्रह* ***खुद अपनी आँख से*** *1978 में, चौथा* ***सबकी आवाज़ के परदे में*** *1994 में, पाँचवाँ* ***पिछला बाकी*** *तथा छठा* ***काल और अवधि के दरमियान*** *प्रकाशित हुए। एक समीक्षा-पुस्तक* ***आलोचना की पहली किताब*** *1983 में प्रकाशित।*

उन्होंने विदेशी कविताओं का हिंदी तथा हिंदी-अंग्रेज़ी अनुवाद अत्यधिक किया है। उनको फिनलैंड के राष्ट्रीय सम्मान ***नाइट ऑफ़ दि आर्डर ऑफ़ दि व्हाइट रोज़*** *से सम्मानित किया गया। इसके अतिरिक्त* ***रघुवीर सहाय सम्मान, शिखर सम्मान*** *हिंदी अकादमी दिल्ली का* ***साहित्यकार सम्मान, मैथिलीशरण गुप्त सम्मान*** *मिल चुका है। इनकी कविताओं में जड़ताओं और अमानवीय स्थितियों के विरुद्ध सशक्त नैतिक स्वर की अभिव्यक्ति है।*

एक कम *कविता के माध्यम से कवि ने स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज में प्रचलित हो रही जीवन शैली को रेखांकित किया है। आज़ादी हासिल करने के बाद सब कुछ वैसा ही नहीं रहा जिसकी आज़ादी के सेनानियों ने कल्पना की थी। पूरे देश का या कहें आस्थावान, ईमानदार और*
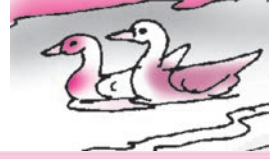
संवेदनशील जनता का मोहभंग हुआ। परिणाम यह हुआ कि आपसी विश्वास, परस्पर भाईचारा और सामूहिकता का स्थान धोखाधड़ी, आपसी खींचतान ने ले लिया और नितांत स्वार्थपरकता का माहौल बनता चला गया। कवि इस माहौल में स्वयं को असमर्थ पाते हुए भी ईमानदारों के प्रति अपनी सहानुभूति स्पष्ट रूप से रखता है तथा कुछ न करने की स्थिति में होने के बावजूद स्वयं को ऐसे लोगों के जीवन-संघर्ष में बाधक नहीं बनाना चाहता। इसलिए वह कम से कम एक व्यवधान तो कम कर ही सकता है जो कि वह करता है, यही कविता का संदेश भी है।

सत्य *कविता में कवि ने महाभारत के पौराणिक संदर्भों और पात्रों के द्वारा जीवन में सत्य की महत्ता को स्पष्ट करना चाहा है। अतीत की कथा का आधार लेकर अपनी बात प्रभावशाली ढंग से कही जा सकती है, यह कविता इसका प्रमाण है। युधिष्ठिर, विदुर और खांडवप्रस्थ-इंद्रप्रस्थ के द्वारा सत्य को, सत्य की महत्ता को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य के साथ प्रस्तुत करना ही यहाँ कवि का अभीष्ट है।*

जिस समय और समाज में कवि जी रहा है उसमें सत्य की पहचान और उसकी पकड़ कितनी मुश्किल होती जा रही है, यह कविता उसका प्रमाण है। सत्य कभी दिखता है और कभी ओझल हो जाता है। आज सत्य का कोई एक स्थिर रूप, आकार या पहचान नहीं है जो उसे स्थायी बना सके। सत्य के प्रति संशय का विस्तार होने के बावजूद वह हमारी आत्मा की आंतरिक शक्ति है–यह भी इस कविता का संदेश है। उसका रूप वस्तु, स्थिति और घटनाओं, पात्रों के अनुसार बदलता रहा है। जो एक व्यक्ति के लिए सत्य है वही शायद दूसरे के लिए सत्य नहीं है। बदलते हालात और मानवीय संबंधों में हो रहे निरंतर परिवर्तनों से सत्य की पहचान और उसकी पकड़ मुश्किल होते जाने के सामाजिक यथार्थ को कवि ने जिस तरह ऐतिहासिक, पौराणिक घटनाक्रम के द्वारा प्रस्तुत करने का प्रयास किया है, वह प्रशंसनीय है।

एक कम

1947 के बाद से
इतने लोगों को इतने तरीकों से
आत्मनिर्भर मालामाल और गतिशील होते देखा है
कि अब जब आगे कोई हाथ फैलाता है
पच्चीस पैसे एक चाय या दो रोटी के लिए
तो जान लेता हूँ
मेरे सामने एक ईमानदार आदमी, औरत या बच्चा खड़ा है
मानता हुआ कि हाँ मैं लाचार हूँ कंगाल या कोढ़ी
या मैं भला चंगा हूँ और कामचोर और
एक मामूली धोखेबाज़
लेकिन पूरी तरह तुम्हारे संकोच लज्जा परेशानी
या गुस्से पर आश्रित
तुम्हारे सामने बिलकुल नंगा निर्लज्ज और निराकांक्षी
मैंने अपने को हटा लिया है हर होड़ से
मैं तुम्हारा विरोधी प्रतिद्वंद्वी या हिस्सेदार नहीं
मुझे कुछ देकर या न देकर भी तुम
कम से कम एक आदमी से तो निश्चिंत रह सकते हो
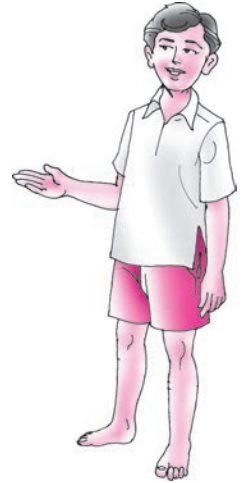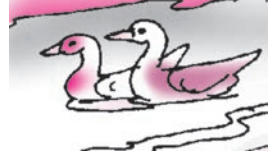
सत्य

जब हम सत्य को पुकारते हैं
तो वह हमसे परे हटता जाता है
जैसे गुहारते हुए युधिष्ठिर के सामने से
भागे थे विदुर और भी घने जंगलों में

सत्य शायद जानना चाहता है
कि उसके पीछे हम कितनी दूर तक भटक सकते हैं

कभी दिखता है सत्य
और कभी ओझल हो जाता है
और हम कहते रह जाते हैं कि रुको यह हम हैं
जैसे धर्मराज के बार-बार दुहाई देने पर
कि ठहरिए स्वामी विदुर
यह मैं हूँ आपका सेवक कुंतीनंदन युधिष्ठिर
वे नहीं ठिठकते

यदि हम किसी तरह युधिष्ठिर जैसा संकल्प पा जाते हैं
तो एक दिन पता नहीं क्या सोचकर रुक ही जाता है सत्य
लेकिन पलटकर सिर्फ़ खड़ा ही रहता है वह दृढ़निश्चयी
अपनी कहीं और देखती दृष्टि से हमारी आँखों में देखता हुआ
अंतिम बार देखता-सा लगता है वह हमें
और उसमें से उसी का हलका सा प्रकाश जैसा आकार
समा जाता है हममें

जैसे शमी वृक्ष के तने से टिककर
न पहचानने में पहचानते हुए विदुर ने धर्मराज को
निर्निमेष देखा था अंतिम बार
और उनमें से उनका आलोक धीरे-धीरे आगे बढ़कर
मिल गया था युधिष्ठिर में
सिर झुकाए निराश लौटते हैं हम
कि सत्य अंत तक हमसे कुछ नहीं बोला
हाँ हमने उसके आकार से निकलता वह प्रकाश-पुंज देखा था
हम तक आता हुआ
वह हममें विलीन हुआ या हमसे होता हुआ आगे बढ़ गया

हम कह नहीं सकते
न तो हममें कोई स्फुरण हुआ और न ही कोई ज्वर
किंतु शेष सारे जीवन हम सोचते रह जाते हैं
कैसे जानें कि सत्य का वह प्रतिबिंब हममें समाया या नहीं
हमारी आत्मा में जो कभी-कभी दमक उठता है
क्या वह उसी की छुअन है
जैसे

विदुर कहना चाहते तो वही बता सकते थे
सोचा होगा माथे के साथ अपना मुकुट नीचा किए
युधिष्ठिर ने
खांडवप्रस्थ से इंद्रप्रस्थ लौटते हुए।
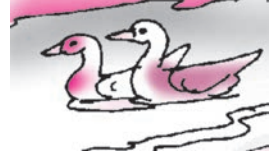
प्रश्न-अभ्यास

एक कम

1. कवि ने लोगों के आत्मनिर्भर, मालामाल और गतिशील होने के लिए किन तरीकों की ओर संकेत किया है? अपने शब्दों में लिखिए।
2. हाथ फैलाने वाले व्यक्ति को कवि ने ईमानदार क्यों कहा है? स्पष्ट कीजिए।
3. 1947 से लोग अनेक तरीके से मालामाल हुए किन्तु विमुद्रिकरण होने से उन स्थितियों में बदलाव आया या नहीं?
4. 'मैं तुम्हारा विरोधी प्रतिद्वंद्वी या हिस्सेदार नहीं' से कवि का क्या अभिप्राय है?
5. भाव-सौंदर्य स्पष्ट कीजिए–
   (क) 1947 के बाद से .... गतिशील होते देखा है
   (ख) मानता हुआ कि हाँ मैं लाचार हूँ .... एक मामूली धोखेबाज़
   (ग) तुम्हारे सामने बिलकुल .... लिया है हर होड़ से
6. शिल्प-सौंदर्य स्पष्ट कीजिए–
   (क) कि अब जब कोई .... या बच्चा खड़ा है।
   (ख) मैं तुम्हारा विरोधी प्रतिद्वंद्वी .... निश्चिंत रह सकते हो।

सत्य

1. सत्य क्या पुकारने से मिल सकता है? युधिष्ठिर विदुर को क्यों पुकार रहे हैं–महाभारत के प्रसंग से सत्य के अर्थ खोलें।
2. सत्य का दिखना और ओझल होना से कवि का क्या तात्पर्य है?
3. सत्य और संकल्प के अंतर्संबंध पर अपने विचार व्यक्त कीजिए?
4. 'युधिष्ठिर जैसा संकल्प' से क्या अभिप्राय है?
5. कविता में बार-बार प्रयुक्त 'हम' कौन है और उसकी चिंता क्या है?
6. सत्य की राह पर चल। अगर अपना भला चाहता है तो सच्चाई को पकड़।–इन पंक्तियों के प्रकाश में कविता का मर्म खोलिए।

योग्यता-विस्तार

1. आप सत्य को अपने अनुभव के आधार पर परिभाषित कीजिए।
2. आज़ादी के बाद बदलते परिवेश का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करने वाली कविताओं का संकलन कीजिए तथा एक विद्यालय पत्रिका तैयार कीजिए।
3. 'ईमानदारी और सत्य की राह आत्म सुख प्रदान करती है' इस विषय पर कक्षा में परिचर्चा कीजिए।
4. गांधी जी की आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' की कक्षा में चर्चा कीजिए।
5. 'लगे रहो मुन्नाभाई' फ़िल्म पर चर्चा कीजिए।
6. कविता में आए महाभारत के कथा-प्रसंगों को जानिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

एक कम

आश्रित	–	किसी के सहारे
निर्लज्ज	–	लज्जा रहित, बेशर्म
निराकांक्षी	–	इच्छा रहित, जिसे किसी चीज़ की इच्छा न हो
प्रतिद्वंदी	–	विपक्षी, शत्रु, विरोधी
निश्‍ंचित	–	चिंतारहित, बेफ़िक्र
प्रकाश पुंज	–	रोशनी का समूह

सत्य

गुहारते हुए	–	गुहार लगाते हुए
दृढ़निश्चयी	–	दृढ़ निश्चय करने वाला
निर्निमेष	–	बिना पलक झपकाए
स्फुरण	–	कँपकपी